P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-4* ISSUE-2* May (Part-1)- 2019
E: ISSN NO.: 2455-0817 *Remarking An Analisation*

लोक नाट्य साँग (स्वांग) में अभिनय का महत्त्व

आदीश कुमार वर्मा
सहायक आचार्य (अतिथि)
शिक्षा विभाग,
हरियाणा केन्द्रीय
विश्वविद्यालय,
महेन्द्रगढ, हरियाणा, भारत

सारांश

किसी भी प्रदेश के लोक नाट्य वहां की संस्कृति का दर्पण कहे जा सकते हैं क्योंकि इनमें वहां की धरती के मौलिक आदर्श एवं जीवन मूल्यों को अभिनय द्वारा भिन्न–भिन्न रंगों में चित्रित किया जाता है। लोकनाट्य की नियमबद्धता, साज–सज्जा, रंग–प्रसाधनों की औपचारिकता स निर्लिप्त तथा बाह्याडम्बरों की जकड़न से मुक्त है। लोक की सहज सरलता, सादगी, स्वाभाविकता, संयम, सदाचार उदारता सहनशीलता, वीरता, कर्त्तव्य परायणता, श्रमता, पारस्परिक सहयोग, संवेदनशीलता, रीति–रिवाज एवं श्रम साधना आदि का मूर्त रूप लोक नाट्य में झलकता है। लोक नाट्य साँग (स्याँग) के प्रस्तुतिकरण में कलाकारों के अभिनय का स्वरूप व महत्त्व की चर्चा इस शोध पत्र में प्रस्तुत है।

मुख्य शब्द : लोक नाट्य, साँग (स्वांग), अभिनय, रीति–रिवाज, प्रस्तुतिकरण।

प्रस्तावना

डॉ. श्याम परमार के अनुसार ''लोक नाट्य लोकरंजन का आडम्बरहीन साधन है, जो नागरिकों के मंच से अपेक्षाकृत निम्न स्तर का पर विशाल जन के हर्षोल्लास से सम्बंधित है। ग्रामीण जनता में इसकी परम्परा युगों से चली आ रही है। चूंकि लोक में ग्रामीण एवं नागरिक जन सम्मिलित है। अतः लोकनाट्य एक मिले जुले जन समाज का मंच है। परिष्कृत रूचि के लोक लोगों के लिए जिन नाटकों का विधान है, उसकी आधार भूमि यही लोकनाट्य है।''[1]

अध्ययन का उद्देश्य

हरियाणा के लोक साँग (स्वांग) में अभिनय के महत्त्व को कलाकारों के प्रस्तुतिकरण के आधार पर समझने का प्रयास करेंगे।

लोक नाट्य साँग (स्वांग)

''लोक नाट्य भी लोकगीत की भाँति लोकमानस को प्रिय लगने वाला व्यापार है अतः कहा जा सकता है कि लोकनाट्य की विशेषता उसके लोकधर्मी स्वरूप में निहित है। लोक जीवन से इसका घनिष्ठ सम्बन्ध है। यही कारण है कि लाक से सम्बंधित उत्सवों तथा माँगलिक कार्यो के समय इनका अभिनय किया जाता है।

डॉ. इन्द्रसैन शर्मा के शब्दों में ''लोकनाट्य एक ऐसा दर्पण है जिसमें समाज के जीवन का उसकी भावनाओं कल्पनाओं का एक अत्यन्त उज्जवल स्वरूप प्रतिबिम्बित होता है और उसी प्रतिबिम्ब में वह अपनी उदार भावनाओं का उनके नाना रूपों में दर्शन कर लेता है। लोक धर्मी सदियों से अणुकरणात्मक अभिव्यक्तियों का वह नाट्य रूप, जो अपने–अपने क्षेत्र के लोकमानस को आहलादित, उल्लसित अनुप्रमाणित करता है। लोकनाट्य कहलाता है।''[2]

डॉ. नगेन्द्र ने लोकनाट्य की परिभाषा इस प्रकार दी है कि लोकनाट्य साहित्य इतना विशाल और महत्वपूर्ण है कि इसमें भारतीय संस्कृति का सहज रूप देखा जा सकता है। इस में सहस्त्र वर्षों तक सहिष्णु बने रहने वाले कृषकों के जीवन दर्शन का पता लगाया जा सकता है। लोक–नाट्यों में वे तत्व निहित हैं, जो समय–समय पर देशकाल के अनुरुप जीवन्त साहित्य प्रस्तुत करके लोक जीवन को रस सम्पृक्त करते रहे। यदि सहानुभूति के साथ इस विशाल साहित्य का अनुशीलन किया जाए तो इस रंगमंच के झीने आवरण से लोक जीवन का शताब्दियों का इतिहास झांकता दिखाई पड़ेगा। देश के विशाल जनसमूह संघर्ष आदि को जीवित कहानी मुखरित हो उठेगी।

लोकनाट्य में लोक साहित्य के गीत, वार्ता, लोकोक्तियों, मुहावरे, नृत्य, नाट्य आदि सभी अंगों का समावेश हो जाने से लोकसाहित्य, लोकनाट्य का एक अंग ही कहा जा सकता ह। परन्तु प्रश्न उठ सकता है कि रंगमंच से जुड़ा होने के कारण लोकनाट्य लोक साहित्य की तरह सर्वकाल एवं सर्वस्थान सुलभ नहीं है। अभिनेताओं के अभाव में इससे सर्वत्र मनोविनोद नहीं किया जा सकता, जब कि लोक साहित्य की विधाएं इस लक्ष्मण रेखा की परिधि में नहीं आती।

विपुलता की दृष्टि से भी लोकनाट्य लोक साहित्य का एक भाग है। क्योंकि इसमें लोक साहित्य का सम्पूर्ण समावेश नहीं हो पाता। अनेक विधाओं को छू भर दिया जाता है। या केवल संकेत देकर ही छोड़ दिया जाता है। लोकसाहित्य के साम्राज में, लोक–नाट्य को एक सम्पन्न प्रदेश ही माना जा सकता है।

साँग का अर्थ एवं परिभाषा

मनोरंजन मनुष्य की स्वाभाविक व नैसर्गिक प्रवृत्ति है। मनोभावों की अभिव्यक्ति, गायन, वादन, लेखन नाटक, कहानी आदि के माध्यम से होती है। अभिव्यक्ति की इसी परम्परा ने ही विभिन्न लोकनाट्य शैलियों को जन्म दिया है जिसके माध्य से लोकसंस्कृति के दर्शन होते हैं। डॉ. बंसी लाल शर्मा के अनुसार लोकनाट्य भी लोकगीत की भाँति लोकमानस को प्रिय लगने वाला व्यापार है। कहा जा सकता है कि लोकनाट्य की विशेषता उसके लोकधर्मी स्वरूप में निहित है। लोक जीवन से इसका घनिष्ठ संबंध है। यही कारण है लोक से संबंधित उत्सवों तथा माँगलिक कार्यों के समय उनका अभिनय किया जाता है।

आदिकाल से आज तक हमारे प्रदेश में विभिन्न लोक गायन कलाएं प्रचलित रहीं। गायन कला में समयानुसार परिवर्तन आते रहे। विविध करण से भरपूर गायन व वादन का मिश्रण हरियाणा की लोकनाट्य कला साँग 'स्वाँग' के रूप में उभरा। जिसमें गायन, संवाद, कथा, संगीत तथा अभिनयशैलियों को यथा स्थान सम्मिलित किया जा रहा है।

साँग हरियाणा की पुरुषगेय लोकनाट्य परम्परा है, जिसमें लोकसंगीत के समस्त तत्व हैं। साँग हरियाणा लोकसमाज की ऐसो त्रिवेणी है, जिसमें गीत, संगीत और अभिनय तीनों का मिश्रण है। काश्मीर के भाण्ड–पाथेर, पंजाब के नक्काल, राजस्थान के ख्याल, उत्तर प्रदेश की नौटंकी व रास, बिहार बंगाल के यात्रा या जात्रा, महाराष्ट्र के तमाशा, असम के सतरिया, तमिलनाड के थेरुकुटु आदि लोकनाट्य शैलियों का अध्ययन करें तो हम देखेंगे कि साँग सबसे सम्पूर्ण लोकमंच कला है। क्योंकि अन्य लोकनाट्य कलाओं में किसी में संगीत की प्रधानता है तो किसी में अभिनय, संवाद, गायन, कथा व भक्ति रस आदि की अधिकता रहती है। साँग की विशिष्ठता यह है कि इसमें अभिनय, संवाद, नृत्य, गायन, कथा, भक्ति भाव व आध्यात्मिकता विषयानुसार सभी तत्वों का सामंजस्य रहता है। इसकी कथावस्तु में की प्रधानता है तो किसी में अभिनय, संवाद, गायन, कथा व भक्ति रस आदि की अधिकता रहती है। साँग की विशिष्ठता यह है कि इसमें अभिनय, संवाद, नृत्य, गायन, कथा, भक्ति भाव व आध्यात्मिकता विषयानुसार सभी तत्वों का सामंजस्य रहता है। इसकी कथावस्तु में सम्पूर्ण लोकसमाया रहता है। हरियाणा की साँग परम्परा में लोकजीवन के विविध पक्षों की मधुर एवं सरस अभिव्यक्ति होती है। अर्थात् यहां के लोकजीवन और साँग के अन्यान्याश्रित सम्बन्ध है।

साँग

हरियाणवी लोकसाहित्य में साँग एक महत्वपूर्ण विधा है। इसमें लोकसंगीत के सभी तत्व विद्यमान हैं। साँग का वर्तमान स्वरूप आज हमारे सामने है वह आज या कल की बात नहीं है बल्कि इसके पीछे वर्षों पुराना इतिहास छुपा है। लोकमंच में साँगीत शब्द का अर्थ स्वाँग–गीत की सन्धि से लिया जाता है। मुहावरे के रूप में स्वाँग करना, साँग करना, साँग बनाना आदि शब्द प्रयुक्त किये जाते है। जो साँग की प्राचीनता एवं व्यपक्ता के घोतक हैं। साँग के स्वरूप के बारे में बात करें तो वर्तमान साँग, भगत या नौटंकी का पूर्ण रूप कहा जा सकता है इसका संबंध संस्कृत के किस शब्द से है। यह कहना अनिश्चित है परन्तु यह स्वाँग का तद्भव रूप ज्ञात होता है स्वाँग का सामान्य अर्थ किसी भी वेश भूषा या भाषा आदि का अनुकरण करना है। भारत वर्ष में साँग अथवा साँग का स्वरूप एवं परम्परा अत्यन्त प्राचीन है। जगदोश चन्द्र माथुर ने इसका संबंध संगीतक शब्द से जोड़ा है। जो कालान्तर में क्रमशः साँगीत और साँग के रूप में विकसित हुआ है।

लोकनाट्यों के लिए मध्ययुग से अब तक पंजाब, ब्रज, हरियाणा एवं राजस्थान में साँग शब्द का ही प्रयोग किया जाता रहा है। साधारण जनता में साँग शब्द का प्रचलन अधिक है जबकि लोकनाट्य में सर्जक कलाकार सांगीत शब्द का अधिक प्रयोग करते हैं। इसके बारे में श्री राजा राम शास्त्री लिखते हैं। संभवतः स्वाँग शब्द को ही लोकभाषा में साँग कहा जाता है। जिसमें किसी विशिष्ट कथा में निहित पात्रों को उसी रूप में दर्शाने की चेष्टा करते हुए अभिनय, वाद–विवाद, एवं गीत, वाघ और नृत्य का आश्रय लिये जाने के कारण कही साँग को साँगीत कहा गया हे। परन्तु साधारण रूप में अभिनय और अनुकरण की प्रधानता होने के कारण संगीत की अपेक्षा स्वाँग या साँग शब्द ही अधिक लोकप्रिय है।

श्रो राजा राम शास्त्री ने सन् 1958 में प्रकाशित अपनी पुस्तक हरियाणा लोकमंच की कहानियां में लिखा है कि एक सौ सत्तर वर्ष बाद उसी में पंडित दीपचंद ने स्वरूप परिवर्तन किया। आरम्भ में स्वाँग का स्वरूप मुजरे सरीखा अर्थात् मुजरे के समान था। नायक नायिका आदि मंच पर खड़ होकर अपना–अपना अभिनय करते थे। और सारंगी तथा ढोलक वाले उनके पीछे–पीछे घूमकर साज बजाते थे।

''श्री राम नारायण अग्रवाल के अनुसार ग्यारहवीं शताब्दी में पंजाब के किन्हीं मलल नामक जाट, रावत नामक राजपूत तथा रंगा नामक जुलाहे ने मिलकर 30 लोगों की एक पार्टी बनाई जो गाँव–गाँव जाकर कुछ गाथाएं गाकर सुनाती थी। जो जनता को अच्छी लगी। यही गाथाएं बाद में विकसित होकर मंच पर आ गई और इसी मंच परम्परा का वर्तमान स्वरूप नौटंकी कहलाया।''[3]

साँग का शाब्दिक अर्थ एवं परिभाषा

साँग का शाब्दिक अर्थ साँग+गीत की सन्धि से लिया जाता है जैसा कि पहले कह भी चुके हैं इसके कई पर्यायवाची भी समय–समय पर प्रचलित रहे है जैसे स्वाँग करना, साँग भरना, साँग बनाना, इन शब्दों का प्रयोग लोक में मुहावरों के रूप में प्रचलित रहा है। साँग अथवा सांगीत शब्दों का शाब्दिक अर्थ जानने के लिए इसकी सन्धि पर दृष्टिपात करना आवश्यक हो जाता है जैसे स+अंग = साँग और साँग + गीत = साँगीत अर्थात अंगो

सहित किसी कथानक का प्रदर्शन जब किसी गीत के साथ होता है तो वह साँग कहा जाता है। इसके शाब्दिक अर्थ को और स्पष्ट करने के लिए कुछ परिभाषाएं इस प्रकार हैं। ''श्री महेन्द्र भानावत् के अनुसार ''साँग हरियाणा का नकल परक नाट्य है। इसका अर्थ रूप भरने अथवा नकल करने से है। साँग धारण कर किसी के रूप को आरोपित करना ही साँग भरना है। यह साँग भरना मुहावरे के रूप में भी प्रचलित है।''[4]

''श्री नारायण अग्रवाल के अनुसार मूलतः साँग किसी भी ऐसे प्रदर्शन को कहा जा सकता है जहां जनता को जोड़कर किसी कथानक को किसी भी रूप में खोलकर मनोरंजन किया जाए या कोई नकल आदि की जावे और जो चबोला शैली में ख्याल परम्परा के अनुसार लिखे जाते हैं तथा जब जिनका प्रधान वाघ नक्कारा है। साँगीत (साँग) का पर्यायवाची माने जाते हैं। बाद में साँगीत स्वाँग शब्द लोकनाटकों के लिए प्रयुक्त होने लगा। जब किसी भी ऐसे लोकनाट्य को साँग कहा जाता है जिसमें कोई पात्र किसी अन्य पात्र का रूप धारण करके कोई प्रदर्शन करे।''[5]

डॉ. जय नारायण कौशिक ने साँग का अथ भेष, रूप, बनावटी रूप, तमाशा, आदि बताते हुए कहते हैं कि ''लोकनाट्य जिसमें नाच, संगीत और कवित्व की धारा प्रवाहित होती हे। नकल, भगत, नौटंकी, तमाशा, नाच, भवाई, भांड–पथेर, जात्रा, विदेशिया, भंडौती, छाऊ–नृत्य, कीर्तनिया, यज्ञज्ञन आदि साँग के अन्य पर्यायवाची शब्द भारत के विभिन्न प्रदेशों में प्रचलित हैं।

''डॉ. ओझा स्वाँग की उत्पत्ति हरियाणा में मानते हैं उनका कथन है कि ''मध्यकाल में सादुल्ला नामक एक प्रसिद्ध लोककवि हरियाणा प्रान्त में उत्पन्न हुआ। जिस प्रकार बारहवीं–तेहरवीं शताब्दी में अब्दुला रहमान कवि ने अपभश संदेश रासक की रचना की उसी प्रकार सादुल्ला नामक कवि ने अनेक लोकगीतों और लोकनाट्यों की रचना की। उनके लोकगीत उनके लोकगीतों एवं लोकनाट्यों की परम्परा विकसित होती गई।''[6]

साँग या स्वाँग हरियाणा का कौमी नाट्य कहा जा सकता है। जनरंजनकारी यह विधा हरियाणा के लोकमानस पर जादू का सा प्रभाव डालती है। इसके मंच के चारों और बैठे दर्शक देख सुन कर मन्त्र मुग्ध हो जाते हैं। तख्त तोड़ नाच, गलबाहियां तथा घूँघट के फटकारे जनता की वर्णनातीत वाह–वाह लूटते हैं। पाँच–छः घण्टे तक लगातार अभिनीत होने वाले इस प्रदर्शन में पुरुष ही नायक एवं नायिका की भूमिका लिंगानुरुप वेश–भूषा में निभाते हैं।

निष्कर्ष

उपर्युक्त परिभाषाओं को ध्यान में रखते हुए हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि साँग साँगीत हरियाणवी लोक संस्कृति की त्रिवेणी है। जिसमें रागनी, संगीत एवं नृत्य अभिनय हो, जिसका कथानक लम्बा हो, कथागीत सवाल जवाब हो, देसी तर्जों, धुनों पर आधारित रागनियां हों। साँग प्रस्तुतिकरण के अभिनय स्वरूप में हरियाणा की संस्कृति एवं धरोहर का आधार विद्यमान है।

अन्त टिप्पणो

1. *परमार, डॉ. श्याम, – भारतीय लोक साहित्य, (1972), पृष्ठ–173*
2. *भानावत, डॉ. महेनद्र, – लोकनाट्य : परम्परा और प्रवृतियां (1971), पृष्ठ–3*
3. *अग्रवाल, डॉ. रामनारायण, –साँगीत : एक लोक नाट्य परम्परा (1970), पृष्ठ–54*
4. *भानावत, डॉ. महेन्द्र – लोक नाट्य : परम्परा और प्रवृतियां (1971), पृष्ठ–23*
5. *अग्रवाल, डॉ. राग नारायण, – साँगीतः एक लोक नाट्य परम्परा (1970), पृष्ठ–21*
6. *डॉ. नगेन्द्र :– भारतीय नाट्य साहित्य (1968), पृष्ठ–84*